RESEARCH REVIEW JOURNALS
RCTRM-2018
OCT- 2018
Special Issue

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

हिन्दुस्तानी संगीत के रागों में विशिष्ट स्वर लगाव : विभिन्न परिप्रेक्ष्य

तेजिंदर कौर

शोधार्थी, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला।

भूमिका : 'राग' हिन्दुस्तानी संगीत का आधार हैं। हिन्दुस्तानी संगीत की प्रत्येक गायन विधा में राग प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में विद्यमान रहते हैं। यद्यपि देखा जाए तो राग स्वरूपों को ग्रहण करने के कारण प्रत्येक गायन विधा रागों का आधार लिए हुए हैं, तथापि प्रत्येक विधा की अपनी कुछ खास विशेषताएँ एवं विशिष्ट नियम है, जो सभी विधाओं को एक–दूसरे से पृथक करते हैं।

आधुनिक समय में शास्त्रीय संगीत में ख्याल गायन शैली प्रचार में है। इस शैली के अधीन राग गायन की अपनी विशेषाताएँ एवं विशिष्ट नियम हैं, जो राग की गरिमा को बरकरार रखने में सक्षम है। इन नियमों के अन्तर्गत प्रत्येक राग में लगने वाले स्वरों का विशिष्ट क्रम होता है, जिसे हम चलन कहते हैं। रागों के चलन द्वारा ही कुछ राग समान स्वरों वाले होने पर भी अलग अस्तित्व रखते हैं। प्रत्येक राग की एक विशिष्ट अभिव्यक्ति होती है, जो चलन द्वारा स्पष्ट होती है। इसी चलन के अन्तर्गत स्वरों एवं वर्णों की विशिष्ट भूमिका होती है। वर्ण स्वरों को गति प्रदान करते हैं और रागों में हर दिशा में उपस्थित नज़र आते है। चार प्रकार के वर्ण सभी रागों में प्रयुक्त होते हैं, जिनसे राग का आकार निर्मित होता है। प्रत्येक राग में स्वर का अपना महत्व है। कुछ स्वर वादी–संवादी एवं न्यास के स्वर होने के कारण राग में प्रबल रहते हैं तो कुछ स्वर विशिष्ट न होकर केवल सहायक स्वरों के रूप में रागों में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इन स्वरों को अनुवादी स्वर भी कहते हैं। इनके अतिरिक्त भी कुछ स्वर एवं श्रुतिया अलंकारिक रूप में प्रयुक्त होकर अप्रत्यक्ष अवस्था में भी रागों में विशिष्ट स्वर लगाव द्वारा सौंदर्य उत्पन्न करते हैं।

रागों में प्रयुक्त होने वाले स्वरों के लगाव की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। सात शुद्ध एवं पाँच, विकृत, कुल मिलाकर 12 स्वरों द्वारा अनंत रागों का एक दूसरे से पृथक अस्तित्व रखना इसी विशिष्ट स्वर लगाव के कारण ही संभव हो पाया है। इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य स्वर लगाव के विभिन्न पक्षों को सामने लाना है। स्वर लगाव के विभिन्न पक्ष निम्नलिखित हैं:

अति कोमल एवं आन्दोलित स्वर लगाव : अति कोमल अवस्था में स्वर अपने नियत स्थान से कुछ नीचे की ओर झुके रहते हैं। इस अवस्था में स्वर का झुकाव अपने से पूर्व स्वर की ओर रहता है। यहां एक बात विशेष ध्यान देने की यह है कि आन्दोलन की क्रिया के बिना स्वरों की अति–कोमल अवस्था को दिखाना संभव ही नहीं। उदाहरणार्थ राग दरबारी कान्हड़ा के संदर्भ में जयसुखलाल त्रि. शाह लिखते हैं:–

''अन्य कान्हड़ों की अपेक्षा इसमें गंधार थोड़ा उतरा हुआ अर्थात अति कोमल और आन्दोलित रहता है। धैवत भी आन्दोलित और गंधार–धैवत एक दूसरे से मधुर संवाद करते दिखाई देते हैं।''[1]

आन्दोलन की क्रिया में किसी दूसरे स्वर के कण की सहायता से मूल स्वर को विशिष्ट प्रकार से हिलाया जाता है, मानो वह स्वर झूल रहा हो। जैसे राग भैरव में कोमल ऋषभ को कोमल गंधार का कण लगा कर आन्दोलित किया जाता है। भिन्न–भिन्न रागों में आन्दोलित स्वरों की काल अवधि भिन्न–भिन्न होती है। इस संदर्भ में पं. विष्णु नारायण भातखंडे रामकली व भैरव के स्वरों की तुलना में लिखते हैं:

"धैवत व ऋषभ स्वर रामकली में आन्दोलित होते हैं, किन्तु भैरव में ऋषभ पर अधिक आन्दोलन रहता है।"[2]

इसी प्रकार मल्हार, नायकी कान्हड़ा इत्यादि रागों में कोमल गंधार आन्दोलित तो होता है परन्तु अति आन्दोलित नहीं। आन्दोलित स्वर को लिखित रूप में दर्शाने के लिए मूल स्वर भाव आन्दोलित होने वाले स्वर के ऊपर कण स्वर एवं स्वर के आगे अवग्रह (ऽ) का चिन्ह लगाया जाता है। जैसे पं. गणेश प्रसाद शर्मा राग देवसाख के संदर्भ में लिखते हैं:–

''इसमें भी गंधार आन्दोलित लगता है, जो कि कान्हड़ा अंग का द्योतक है, जैसे 'मग ऽ ऽ, प मग ऽ, म रे सा।''[3]

इसी प्रकार शुद्ध स्वरों पर भी आन्दोलन की क्रिया राग को विशिष्ट सौंदर्य प्रदान करती है जैसे राग मेघ मल्हार में "ऋषभ पर आन्दोलन करते हुए कण स्वर के रूप में मध्यम लिया जाता है, और बार–बार आन्दोलित ऋषभ मरे, मरे को लेने से ही मेघ–मल्हार का स्वरूप सारंग से अलग व्यक्त होता है।"[4]

इस प्रकार अलंकारिक स्वर अर्थात् कण, मींड इत्यादि क्रियाएँ समान स्वरों के लगाव में भिन्नता उत्पन्न कर रागों को पृथक करने में प्रमुख भूमिका अदा करते हैं।

कणयुक्त स्वर लगाव: आन्दोलन की क्रिया के अतिरिक्त भी स्वतंत्र रूप में कण का प्रयोग स्वर के लगाव को विशिष्टता प्रदान करता है। राग विशिष्ट में जब किसी स्वर को लेने से पूर्व अन्य स्वर का स्पर्श किया जाए और फिर मूल स्वर लिया जाए तो इस क्रिया में स्पर्श किया हुआ स्वर कण स्वर कहलाता है। इस तरह का कणयुक्त स्वर लगाव राग की अभिव्यक्ति मे विशिष्ट भूमिका अदा करता है। कणयुक्त स्वर दो प्रकार से प्रयुक्त होते हैं, एक पूर्व लगन कण, दूसरा अनुलगन कण। पूर्व लगन कण की उदाहरण पं. गणेश प्रसाद शर्मा अपनी पुस्तक में राग मधुवन्ती का परिचय देते समय लिखते हैं: "इस राग में लौटते समय ऋषभ पर षड़ज का कण हमेशा लगता है, इसमें मुल्तानी की भांति गंधार पर तीव्र मध्यम का कण लगाया करते हैं।"[5]

डॉ. रमा सराफ भीमपलासी राग के परिचय में लिखती हैं:

"भीमपलासी राग के अवरोह में पंचम को धैवत का कण जैसे ध्प तथा षड़ज को ऋषभ का कण जैसे रेस लगाने से राग की शोभा बढ़ती है।"[6]

अनुलगन कण की उदाहरण पं. गणेश प्रसाद शर्मा, राग जलधर केदार के परिचय में इस प्रकार लिखते हैं:

"जब हम केदार राग का रूप दिखाते हुए मध्यम से पंचम पर जाते हैं तो मध्यम पर गंधार का अनुलगन कण होता है जैसेः 'स म, मग प।"[7]

पूर्व लगन कण को प्रमुख स्वर से पहले लिखते हैं तथा अनुलगन कण को प्रमुख स्वर के बाद। यह गाने में भी इसी प्रकार लिए जाते हैं। कण स्वर का प्रयोग राग विशिष्ट की पहचान में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है जैसे राग जय जयवन्ती की स्वर संगति 'ध नी रे' में ऋषभ पर गंधार का कण एवं राग हमीर की स्वर संगति 'प म प ग म धी ध' में धैवत पर निषाद का कण राग को विशिष्ट सौंदर्य प्रदान करने के साथ ही इन रागों की पहचान भी करवाता है।

मींडयुक्त स्वर लगावः मींडयुक्त स्वर लगाव एक विशिष्ट प्रकार की क्रिया है जिसमें किसी स्वर विशेष को बिना तोड़े अथवा बिना छोड़े किसी दूसरे स्वर को इस प्रकार से लेना जैसे वह एक दूसरे से जुड़े हों। कुछ रागों में एक अथवा दो स्वर या स्वर संगतियां मींड द्वारा प्रयुक्त होतीं हैं जैसेः राग 'भैरव' में मध्यम से ऋषभ पर मींड द्वारा आते हैं। इसी तरह राग 'श्री' में रे प एवं प रे की मींडयुक्त संगति इत्यादि। डॉ. रमा सराफ राग बिहाग के संदर्भ में लिखतीं हैं:–

''नि से प तथा ग से सा पर आते समय मींड का काम बहुत सुन्दर बन पड़ता है।''[8]

इस के अतिरिक्त कुछ राग तो मींड प्रधान होने के कारण एक विशिष्ट व्यक्तित्व धारण करते हैं जैसे राग बिलासखानी तोड़ी इत्यादि मींड प्रधान राग है। राग बिलासखानी तोड़ी के संदर्भ में पं. रामाश्रय झा 'रामरंग' अपनी पुस्तक में लिखते हैं:

"इसमें मींड का प्रयोग अधिक होता है यथा – रें नि ध नि ध म ग रे ग म ग रे ग रे नि ध स। अवरोह के इस स्वर समूह को मींड के द्वारा सावकाश रीति से उच्चारण करने से यह राग तत्काल ही स्पष्ट हो जाता है।"[9]

इस प्रकार यह क्रिया राग विशिष्ट को उभारने में तथा समप्राकृतिक रागों से पृथक करने में विशेष भूमिका अदा करती है।

गमकयुक्त स्वर लगावः गमकयुक्त स्वर लगाव में किसी स्वर को विशिष्ट प्रकार से हिलाने की क्रिया शामिल है। पं. गणेश प्रसाद शर्मा राग खट के विषय में लिखते हैं:

"इस राग को गमक के साथ गाते हैं। इस राग को गाने का एक विशेष ढंग है।"[10]

इसी प्रकार डॉ. सरिता निगम लिखती हैं:–

"गमक के द्वारा भी एक रागांग को दूसरे रागांग से पृथक किया जा सकता है। उदाहरण के लिए मेघ और मध्यमाद सारंग की स्वरावली एक है परन्तु गमक के साथ बजाने पर मेघ मध्यमाद सारंग से अलग किया जा सकता है।"[11]

विश्वम्भरनाथ भट्ट और हरिशचन्द्र श्रीवास्तव अपनी पुस्तक में मालकंस राग के बारे में लिखते हैं:

"मींड और गमक का प्रयोग भी प्रचूरता से होता है।"[12]

इस तरह राग दरबारी भी गमकयुक्त राग है। गमकयुक्त स्वर लगाव राग एवं रागांग दोनों को विशेष स्वरूप एवं सौंदर्य प्रदान करता है।

लिपटे हुए स्वरों का विशिष्ट लगावः ऐसे स्वर जो एक दूसरे से इस प्रकार लिपटे हुए प्रयुक्त होते हैं कि इन को अलग करना मानो राग की आत्मा को नष्ट करने के समान हो जाता है। इस तरह से लिपटे हुए स्वर तोड़ी थाट एवं तोड़ी अंग के रागों में विशेष रूप से द्रष्टव्य हैं। तोड़ी अंग में ऋषभ से गंधार एवं गंधार से ऋषभ इस प्रकार लिपटे हुए प्रतीत होते हैं जैसे ऋषभ से गंधार निकल रहा हो और गंधार से ऋषभ। इस के अतिरिक्त मालकोंस में भी लिपटे हुए स्वर प्रयुक्त होते हैं। यह इस कद्र लिपटे हुए होते हैं कि कुछ उस्ताद इसे बिना हड्डी का राग भी कहते हैं। इस तरह का स्वर लगाव राग को अद्भुत सौंदर्य प्रदान करता है।

खड़े एवं प्रबल स्वर : कुछ रागों में कुछ स्वरों पर विशिष्ट प्रकार से न्यास किया जाता है, जिस से वह स्वर खड़े हुए प्रतीत होते हैं। जैसे राग मारवा में 'कोमल ऋषभ' कोमल होते हुए भी एक विशिष्ट प्रकार से खड़ा हुआ प्रतीत होता है कि षड़ज की स्थिति को भी कमज़ोर कर देता है। इस तरह राग मारवा में कोमल ऋषभ खड़ा हुआ, स्थिर एवं काफी प्रबल रहता है। इस स्थिति में मारवा की अलग पहचान स्थापित करने में खड़े हुए कोमल ऋषभ की विशेष भूमिका नज़र आती है। खड़े स्वरों के संदर्भ में पं. माणिकबुआ ठाकुरदास राग वृन्दावनी सारंग के परिचय में लिखते हैं:

"यह राग खड़े स्वरों से ही गाया जाता है। मींड अंग से गाया जाये तो मल्हार का भास निर्माण होगा.....उत्तरार्द्ध में भी 'म प नी नी प, म प नी सां' ऐसे खड़े स्वर गाने से सारंग दिखाई देता है।"[13]

स्वरों का अल्पत्वः हिन्दुस्तानी संगीत में बहुत से राग ऐसे हैं जिनमें एक या दो स्वर अल्प प्रयुक्त होते हैं। अल्प अवस्था में भी स्वर विशेष, राग की अभिव्यक्ति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। अल्प स्वरों के संदर्भ में पं. विष्णुनारायण भातखंडे अपनी पुस्तक में लिखते हैं:

"विवादी स्वरों का स्वल्प प्रयोग जब गायन में होता है, तब उन्हें अल्पत्व प्राप्त होता है। प्रत्येक गायन में विवादी स्वर थोड़े प्रमाण से व योग्य स्थान पर लगाने की स्पष्ट आज्ञा दे ही रखी है।"[14]

इस संदर्भ में कुमकुम सहदेव राग बिहाग के परिचय में लिखते हैं:

"इस राग में आरोही में ऋषभ स्वर वर्ज्य है– सा ग मग रे सा, सां नि प, प नि सां रें सां। इसका अल्प प्रयोग केवल अवरोह में ही किया जाता है।"[15]

उपर्युक्त अनुसार तो वर्जित स्वर के अल्प प्रयोग का कथन स्पष्ट होता है किन्तु रागों में कुछ स्वर वर्जित न होकर भी अपने अल्प प्रयोग से विशेष महत्व रखते हैं। अल्प स्वर को डॉ. प्रियंका कौशल द्वारा दिए गए राग जैत श्री के परिचय से समझाया जा सकता है:

"इस राग के आरोह में मध्यम स्वर का अल्प प्रयोग करना चाहिए अर्थात ग प व प ग की संगति को संभाले रखना चाहिए। 'ग म प प म ग रे स, नि स ग, स ग म प।"[16]

उपर्युक्त उदाहरण से ज्ञात होता है कि चाहे अल्प मात्रा में ही सही परन्तु अल्प स्वर प्रत्यक्ष रूप से राग में दृष्टिगोचर होता है। पं. भातखंडे जी जिस स्वल्प स्वर की बात कर रहे हैं, उसे अल्प स्वर की अपेक्षा विवादी स्वर ही कहा जाए तो ज्यादा तर्क संगत प्रतीत होगा।

स्वर का गुप्त रूप से प्रयोगः ऐसा स्वर जो राग में गुप्त रूप में लिया जाता है। इस से वह स्वर विशेष, राग में प्रत्यक्ष रूप में न होकर भी अपना अस्तित्व बनाए रखता है। इसकी स्पष्ट उदाहरणः राग केदार में प्रयुक्त होने वाले गंधार स्वर का गुप्त रूप में विद्यमान होना है। इस संदर्भ में डॉ. रमा सराफ लिखती हैंः

"राग केदार में गंधार का प्रयोग करने में बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है। राग केदार में गंधार स्वर लुप्त है, ऐसा गुणी लोग कहते हैं। यह स्वर शुद्ध मध्यम के तेज से हमेशा ढका हुआ रहता है।"[17]

इसी तरह जयसुखलाल त्रिभुवदास गंधार स्वर का गुप्त प्रयोग राग सोरठ में इस तरह बताते हैंः

"सोरट के आरोह में ग, ध वर्ज्य और अवरोह में गंधार बहुधा 'म ग रे' इस तरह मींड से गुप्त गंधार स्वरूप से लिया जाता है।"[18]

इस तरह स्पष्ट होता है कि अल्प स्वर एवं गुप्त स्वर दोनों में कुछ अंतर जरूर है। अल्प मात्रा में प्रयुक्त होने पर भी यह राग को विशिष्ट सौंदर्य प्रदान करने में सक्षम है।

स्वरों का शीघ्र उच्चारण : हिन्दुस्तानी संगीत में कुछ राग ऐसे हैं जिनमें स्वरों पर ठहराव नहीं होता। इन रागों की प्रवृति चंचल होने से स्वरों में शीघ्रता दिखाई देती है। इस कथन को उदाहरण देकर समझाया जा सकता है। डा. प्रियंका कौशल, अपनी पुस्तक में राग कालिंगड़ा के बारे में लिखती हैंः

"यह भैरवांग का राग है किन्तु भैरव का धीर, गंभीर, रूप और कालिंगड़ा का चपल रूप होता है। इन दोनों में बहुत अंतर है। इसकी चाल उछलते–कूदते बालकों जैसी होती है। कहीं किसी स्वर पर ठहरना इसे प्रिय नहीं, छलांग भरी ठहर गए बस उतना ही ठहरना इसे भाता है।"[19]

स्वरों का शीघ्रता से प्रयोग अपने आप में चंचलता का अहसास कराता है। कुछ रागों में केवल एक या दो स्वर ऐसे होते हैं जिनको शीघ्रता से लिया जाता है। यह उस राग विशिष्ट में उस स्वर के अलंघन अल्पत्व का द्योतक है। उदाहरणार्थ पं. गणेश प्रसाद शर्मा, राग मारू बिहाग के परिचय में लिखते हैंः

""निषाद से पंचम पर लोटते समय धैवत को कुछ जल्दी से उच्चारित करते है।"[20]

इस प्रकार स्वरों का शीघ्र प्रयोग भी राग की अभिव्यक्ति को स्थापित करने में प्रमुख भूमिका अदा करता है।

विश्लेषण : उपर्युक्त बताए गए स्वर लगावों में बहुत से राग ऐसे होते हैं जिनमें उपर्युक्त में से कोई एक अलंकारिक स्वर प्रयुक्त होता है। बहुत से अन्य राग ऐसे भी हैं जहां एक से ज्यादा अलंकारिक स्वर प्रयुक्त होते हैं। असल में भिन्न–भिन्न तरीकों के स्वर लगाव ही रागों को विशिष्ट शक्ल प्रदान करते हैं। इस श्रेणी में कुछ राग ऐसे भी आते हैं जिनमें कोई एक स्वर ऐसा प्रयुक्त होता है जिस पर एक से ज्यादा अलंकारिक स्वरों का प्रयोग किया जाता है। ऐसे रागों मे उस स्वर विशिष्ट की खास जगह होती है जो उस स्वर के राग में विशिष्ट लगाव के कारण दृष्टिगत होती है। जैसे राग मल्हार में ऋषभ पर मध्यम का कण लगा कर फिर ऋषभ से पंचम की ओर मींड द्वारा जाया जाता है। मल्हार में गंधार स्वर भी आन्दोलित होता है। इस प्रकार इस एक राग में कण, मींड, खटका, आन्दोलन इत्यादि अलंकारों का प्रयोग राग की विशिष्ट अभिव्यक्ति में सहायक सिद्ध होते हैं। इस संदर्भ में जयसुखलाल त्रि. लिखते हैंः

"मल्हार के खास अंग अथवा मल्हार की स्वरसंगतियों को देखें तो 'मरेम, मरेम', 'मरेप', और 'मरे प, म रे' इत्यादि स्वरसंगतियों में बार–बार दिखाई देता मुक्त मध्यम, मध्यम पर 'मपमम' ऐसा एक विशिष्ट तरह का खटका 'निप, नि म प' और 'सानि, सानि, 'सां नि नि –प' इस तरह कणयुक्त दोहराया हुआ निषाद, आन्दोलित गंधार, इत्यादि से यह एक मल्हार प्रकार है ऐसा ख्याल तुरंत ही आ जाता है।"[21]

इस प्रकार हिन्दुस्तानी संगीत के रागों में स्वरों के विशिष्ट लगाव का महत्व स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। यही विशिष्ट लगाव ही हिन्दुस्तानी संगीत को विलक्षणता प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. जयसुखलाल त्रिभुवनदास शाह, मल्हार के प्रकार (30 प्रकार), जयसुखलाल त्रि. शाह, बम्बई, 1969, पृ. 21.
2. पं. विष्णु नारायण भातखंडे, हिन्दुस्तानी संगीत–पद्धति क्रमिक पुस्तक मालिका, चौथी पुस्तक, संगीत कार्यालय, हाथरस, 1985, पृ.311.
3. पं. गणेश प्रसाद शर्मा, राग प्रवीण, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण, 2011, पृ. 98.
4. पं. विनायक नारायण पटवर्धन, राग–विज्ञान, चतुर्थ भाग, पंचम आवृति, 1968, पृ.37.
5. पं. गणेश प्रसाद शर्मा, राग प्रवीण, पृ. 25.
6. डॉ. रमा सराफ, भारतीय संगीत सरिता, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 2003, पृ.184.
7. पं. गणेश प्रसाद शर्मा, राग प्रवीण, पृ.35.
8. डॉ. रमा सराफ, भारतीय संगीत सरिता, पृ. 162.
9. पं. रामाश्रय झा, 'रामरंग अभिनव गीतांजलि, भाग एक, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014, पृ.163.
10. पं. गणेश प्रसाद शर्मा, राग प्रवीण, पृ.229.
11. डॉ. सरिता निगम, हिन्दुस्तानी संगीत में राग वर्गीकरण, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2012, पृ.83.
12. विश्वम्भरनाथ भट्ट, हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव, संगीत–सीकर, संगीत कार्यालय, हाथरस, द्वितीय संस्करण, 1945, पृ.233.
13. पं. माणिकबुआ ठाकुरदास, राग दर्शन, प्रथम–भाग, कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर, 1987, पृ. 86–87.
14. पं. विष्णुनारायण भातखंडे, हिन्दुस्तानी संगीत–पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका, चौथी पुस्तक, पृ.34.
15. कुमकुम सहदेव, भारतीय शास्त्रीय संगीत में रागों का परिचय, राजस्थानी, ग्रन्थागार, जोधपुर, 2000, पृ. 109.
16. डॉ. प्रियंका कौशल, सन्धि प्रकाश राग, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृ.149.

17. डॉ. रमा सराफ, भारतीय संगीत सरिता, पृ.154.
18. जयसुखलाल त्रिभुवनदास शाह, मल्हार के प्रकार, (30 प्रकार), जयसुखलाल त्रि.शाह, बम्बई, 1969, पृ.147.
19. डॉ. प्रियंका कौशल, सन्धि प्रकाश राग, पृ.111.
20. पं. गणेश प्रसाद शर्मा, राग प्रवीण, पृ.56.
21. जयसुखलाल त्रिभुवनदास शाह, मल्हार के प्रकार, (30 प्रकार), पृ. 6–7.